[2022] 3 एस. सी. आर. 366

चंद्रपाल

वी.

छत्तीसगढ़ राज्य (पूर्व एम. पी.)

(2015 की आपराधिक अपील संख्या 378)

27 मई, 2022

[डॉ. धनंजय वाई चंद्रचूड़ और

बेला एम. त्रिवेदी, जे. जे.]

दंड सहिता, 1860 एस.एस. 302 और 201/ 34 हत्या-अभियोजन का प्रकरण कि एक लड़की और एक लड़का जिनका प्रेमसंबंध था वह लापता हो गए और दस दिन बाद उनके शव सड़ी हुई अवस्था में पेड़ पर लटके हुए पाए गए- अपीलकर्ता अभियुक्त और अन्य सह-अभियुक्तों के विरूद्ध हत्या का आरोप - धारा 302/ 34 औ र 201/ 34 के अधीन दोषसिद्धि और तदनुसार सजा सुनाई गई-अपील में, उच्च न्यायालय ने अपीलकर्ता के संबंध में दोषसिद्धि और दोषसिद्धि के आदेश को बरकरार रखा , हालांकि धारा 302/ 34 के अधीन सह-अभियुक्तों की दोषसिद्धि को अपास्त कर दिया, परंतु धारा 201/ 34 के अधीन अपराध के लिए बरकरार रखा गया- अपील पर, माना गया कि यदि अभियोजन पक्ष का साक्ष्य मृतक की हत्या के सबूत से कम हो जाता है और यदि आत्महत्या की मृत्यु की संभावना से इंकार नहीं किया जा सकता है, तो अपीलाकर्ता को केवल "अंतिम बार एक साथ देखा गया" के सिद्धांत के आधार पर दोषी नहीं ठहराया जा सकता है - अभिलेख पर साक्ष्य की समग्रता को ध्यान में रखते हुए, उच्च न्यायालय ने अपीलकर्ता को कथित आरोप धारा 302/ 34 के लिए दोषी ठहराने में त्रुटि की। सह-अभियुक्तों द्वारा कथित तौर पर की गई न्यायिकेत्तर संस्वीकृति के बहूत ही कमजोर प्रकार के साक्ष्य पर विश्वास करते हुए और अभियोजन पक्ष के गवाह द्वारा स्थापित "अंतिम बार एक साथ देखा गया" के सिद्धांत पर विश्वास करते हुए- साथ ही, इस बात का कोई सबूत नहीं था कि मृतक लड़की की कथित तौर पर हत्या कैसे और किसके द्वारा की गई थी, उसे अभियोजन पक्ष द्वारा प्रस्तुत किया गया था - इस प्रकार, अभियोजन अपीलकर्ता के विरूद्ध लगाए गए आरोपों को युक्तियुक्त संदेह से परे साबित करने में विफल रहा- संदेह चाहे कितना ही प्रबल क्यों न हो, वह सबूत का स्थान नहीं ले सकता - अपीलकर्ता अपने विरूद्ध लगाए गए आरोपों से बरी हो गया - साक्ष्य न्यायिकेत्तर संस्वीकृति- "अंतिम बार एक साथ देखा गया" का सिद्धांत।

साक्ष्य न्यायिकेत्तर संस्वीकृति- साक्षियक मूल्य- माना गयाः न्यायिकेत्तर संस्वीकृति एक कमजोर प्रकार का साक्ष्य है- जब तक कि यह विश्वास को प्रेरित नहीं करता है या दृढ़ प्रकृति के किसी अन्य सबूत द्वारा पूरी तरह से पुष्टि नहीं की जाती है, आमतौर पर हत्या के अपराध के लिए दोषसिद्धि केवल न्यायिकेत्तर संस्वीकृति के आधार पर नहीं की जानी चाहिए-सह-अभियुक्त द्वारा की गई न्यायिकेत्तर संस्वीकृति को साक्ष्य के रूप में केवल एक संपुष्टिकारक साक्ष्य के रूप में स्वीकार किया जा सकता है।

न्यायालय ने अपील स्वीकार करते हुए कहा

मानाः 1.1 यह कहा जा सकता है कि अविवादित रूप से अभियोजन का पूरा प्रकरण परिस्थितिजन्य साक्ष्य पर आधारित था , क्योंकि कथित घटना का कोई चक्षूदर्शी गवाह नहीं था। भा.द.सं. की धारा 302 के अधीन किसी आरोपी को दोषी ठहराने के लिए न्यायालय को पहले यह देखना होगा कि अभियोजन पक्ष ने मानव वध के तथ्य को साबित किया है या नहीं। अ.सा.-1 3 डॉक्टर की साक्ष्य, जिसने दोनों मृतकों का पोस्टमार्टम किया था, इस संबंध में सबसे अधिक सुसंगत होगी। उन्होंने न्यायालय के समक्ष अपने बयान में अन्य बातों के अलावा कहा था कि दिनांक 12.12.1994 को उन्होंने दो मृतकों का पोस्टमार्टम किया था, मृतक बी की गर्दन पर मौजूद घाव का निशान मृत्यु पूर्व का था। ऐसा प्रतीत होता था कि मृत्यु का कारण फांसी के कारण दम घुटना प्रतीत हुआ और यह कि मृत्यु 8 से 10 दिनों के भीतर हुई थी और मृत्यु की प्रकृति आत्मघाती थी। उक्त डॉक्टर ने के के लिए भी उक्तानुसार ही तथ्य बताए थे। वह इस पर कोई राय व्यक्त नहीं कर सका कि यह एक मानव वध की मृत्यु थी या नहीं। अभियुक्त के अधिवक्ता के द्वारा किए गए प्रतिपरीक्षण में, उसने स्पष्ट रूप से स्वीकार किया था कि उसे मानव वध के कारण हुई मृत्यु का कोई लक्षण नहीं मिला , न ही उसने दिनांक 12.12.1994 को दी गई अपनी रिपोर्ट में यह राय दी थी कि मृतकों की मृत्यु हत्या थी। निःसंदेह, उन्होंने कहा था कि दिनांक 30.04.1995 को सौंपी गई रिपोर्ट के आधार पर यह अनुमान लगाया जा सकता है कि मृत्यु मानववध हो सकती हैं। (पैरा 7, 8) (374-सी ; 375-ई-जी; 376-बी-सी)

1. 2 उच्च न्यायालय ने आपेक्षित निर्णय में भा.द.सं. की धारा 302 के अधीन अपराध के लिए अपीलकर्ता की दोषसिद्धि की पुष्टि करने से पहले, इस निष्कर्ष पर पहुंचने के लिए डॉक्टर के सभी साक्ष्य पर विचार नहीं किया कि क्या मृत्यु का कारण हत्या थीं। दुर्भाग्य से , सत्र न्यायालय ने यह भी पाया कि डॉक्टर का बयान महत्वपूर्ण नहीं था क्योकि डॉक्टर ने एक राय व्यक्त की थी जो न तो अभियोजन पक्ष के लिए फायदेमंद थी और न ही बचाव पक्ष के लिए। जब अभियोजन पक्ष का प्रकरण परिस्थितिजन्य साक्ष्य पर आधारित था तो अभियोजन पक्ष के लिए युक्तियुक्त संदेह से परे यह साबित करना आवश्यक था कि मृतकों की मृत्यु का कारण हत्या थी एवं आत्महत्या नहीं थी, विशेष रूप से तब जब आरोपी के बचाव के कथन यह थे कि बी और के ने आत्महत्या की थी और जब उनका पोस्टमार्टम करने वाले डॉक्टर ने भी राय दी थी कि उनकी मृत्यु की प्रकृित आत्महत्या थी। (पैरा 9) (376- सी-एफ)

1. 3 साक्ष्य अधिनियम की धारा 30 के अनुसार, जबकि एक से अधिक व्यक्ति एक ही अपराध के लिए संयुक्त रूप से विचारित हैं, तथा ऐसे व्यक्तियों में से किसी एक के द्वारा, अपने को और ऐसे व्यक्तियों में से किसी अन्य को प्रभावित करने वाली की गई संस्वीकृति को साबित किया जाता है तब न्यायालय ऐसी संस्वीकृति को ऐसे अन्य व्यक्तियों के विरूद्ध तथा ऐसी संस्वीकृति करने वाले व्यक्ति के विरूद्ध विचार में ले सकेगा। हालांकि, न्यायिकेत्तर संस्वीकृति एक कमजोर प्रकार का साक्ष्य है और जब तक यह विश्वास पर आधारित न हो या दृढ़ प्रकृति के किसी अन्य साक्ष्य द्वारा पूरी तरह से पुष्ट न हो, तब तक हत्या के अपराध के लिए आमतौर पर केवल न्यायिकेत्तर संस्वीकृति के साक्ष्य के आधार पर दोषसिद्धि नहीं की जाना चाहिए। सहअभियुक्त द्वारा की गई न्यायिकेत्तर संस्वीकृति को साक्ष्य के रूप में केवल पुष्टि करने वाले साक्ष्य के रूप में स्वीकार किया जा सकता है। आरोपी के विरूद्ध किसी ठोस

सबूत के अभाव में सहअभियुक्त द्वारा कथित तौर पर की गई न्यायिकेत्तर संस्वीकृति के आधार पर कोई दोषसिद्धि नहीं की जा सकती है। (पैरा 11) (377-ए-डी)

म.प्र. राज्य द्वारा सीबीआई एवं अन्य बनाम पलटन मल्लाह एवं अन्य **(2005) 3 एससीसी 169: (2005) (1) एससीआर 710;** सहदेवन और अन्य बनाम तमिलनाडु राज्य **(2012) 6 एससीसी 403 : (2012) (4) एससीआर 366;** जगरूप सिंह बनाम पंजाब राज्य **(2012) 11 एससीसी 768: (2012) (7) एससीआर 91** ; एस के युसुफ बनाम पश्चिम बंगाल राज्य **(2011) 11 एससीसी 754: (2011) 8 एससीआर 83** ;पंचो बनाम हरियाणा राज्य **(2011) 10 एससीसी 165 : (2011) (12) एससीआर 1173- के माध्यम से संदर्भित।**

1.4 वर्तमान प्रकरण में, यह सच है कि सह-अभियुक्त ने कथित तौर पर अ.सा.-4 के समक्ष आत्म-अभियोगात्मक न्यायिकेत्तर संस्वीकृति की थी, और अन्य गवाहों अर्थात, अ.सा.-5, अ.सा.-6 और अ.सा.-7 के समक्ष न्यायिकेत्तर संस्वीकृति की थी, जिसमें कहा गया था कि अन्य तीन आरोपियों ने हत्या की थी और उसे वी ने शवों को ठिकाने लगाने और साक्ष्य छिपाने में उनकी सहायता करने के लिए कहा था। यद्यपि, सत्र न्यायालय ने वी के न्यायिकेत्तर संस्वीकृति के उक्त साक्ष्य पर विश्वास करते हुए सभी चार आरोपियों को दोषी ठहराया, तथापि, उच्च न्यायालय ने सह अभियुक्त वी द्वारा की गई उक्त दो न्यायिकेत्तर संस्वीकृति के बीच की असंगतता पर विचार करते हुए , तीनों आरोपियों अर्थात बी, एम और वी को उनके विरूद्ध लगाए गए आरोपों में बरी कर दिया, हालांकि वी द्वारा की गई उक्त न्यायिकेत्तर संस्वीकृति को अपीलकर्ता सी के विरूद्ध लगाए गए अपराधों के लिए उसे दोषी ठहराने के लिए एक आपत्तिजनक परिस्थिति माना गया। यदि सह.अभियुक्त वी के साक्ष्य के ऐसे कमजोर साक्ष्य के भाग को अन्य सहअभियुक्तों को मृतक बी और के की हत्या के दोषी ठहराने के लिए विधिवत साबित नहीं किया गया था या विश्वसनीय नहीं पाया गया था, तो उच्च न्यायालय वर्तमान अपीलकर्ता के विरूद्ध उक्त कथित साक्ष्य का उपयोग उसे कथित अपराध के लिए दोषी ठहराने के उददेश्य से नहीं कर सकता था। (पैरा 12) (378-बी-एफ)

1.5 अभियोजन पक्ष के मामले के अनुसार, अ.सा.-1 ने आरोपी सी को मृतक के को फोन करते हुए और उस भयानक रात में अपने घर के अंदर ले जाते हुए देखा था। इस तथ्य के अलावा कि उक्त डी ने उस समय या तारीख के बारे में नहीं बताया था जब उसने आखिरी बार के को सी के साथ देखा था, यहां तक कि यह भी मानते हुए कि उसने सी को अपने घर पर के को फोन करते हुए देखा था जब वह ग्राम पंचायत के परिसर में बैठा था, घटना उस दिन से 10 दिन पहले हुई थी जिस दिन मृतकों के शव मिले थे। दोनों घटनाओं के बीच समय का अंतराल- जिस दिन डी ने सी को अपने घर पर के को बुलाते हुए देखा और जिस दिन के का शव काफी बड़ा पाया गया था, अपीलकर्ता को कथित अपराध से जोड़ना मुश्किल है, विशेष रूप से तब जबकि अभियोजन पक्ष द्वारा प्रस्तुत कोई अन्य निर्णायक और ठोस सबूत नहीं है। (पैरा 1 3) (378-एफ-एच; 379-ए)

1.6 भा.द.सं. की धारा 302 के अधीन किसी आरोपी को दोषी ठहराने के लिए अभियोजन

द्वारा साबित किया जाने वाला पहला और सबसे महत्वपूर्ण पहलू मानव वध का तथ्य है। यदि अभियोजन पक्ष के साक्ष्य मृतक की हत्या के सबूत से कम है, और यदि आत्महत्या की मृत्यु की संभावना से इंकार नहीं किया जा सकता है, तो इस न्यायालय की राय में, अपीलकर्ता- अभियुक्त को केवल " अंतिम बार एक साथ देखे जाने के बाद " के सिद्धांत के आधार पर दोषी नहीं ठहराया जा सकता है। (पैरा 18) (379-एफ-जी)

1.7 अभिलेख पर साक्ष्य की समग्रता को ध्यान में रखते हुए, उच्च न्यायालय ने कथित तौर पर की गई न्यायिकेत्तर संस्वीकृति के बहुत ही कमजोर प्रकार के साक्ष्य पर विश्वास करते हुए सह - अभियुक्त वी, और अ.सा.-1 द्वारा स्थापित "अंतिम बार एक साथ देखे जाने" के सिद्धांत पर विश्वास करते हुए अपीलकर्ता-अभियुक्त को भा.द.सं. की धारा 302 सहपठित धारा 34 के कथित आरोप के लिए दोषी ठहराने में घोर त्रुटि की। यह भी ध्यान देने वाली बात यह है कि अभियोजन पक्ष द्वारा मृतक बी की कथित तौर पर हत्या कैसे और किसने की, इसका कोई सबूत पेश नहीं किया गया है। इन परिस्थितियों में, यह माना जाना आवश्यक है कि अभियोजन पक्ष अपीलकर्ता -अभियुक्त के विरूद्ध लगाए गए आरोपों को युक्तियुक्त संदेह से परे साबित करने में पूर्णतः विफल रहा है। संदेह चाहे कितना ही प्रबल क्यों न हो, वह सबूत का स्थान नहीं ले सकता। अपीलकर्ता को उसके विरूद्ध लगाए गए आरोपों से बरी कर दिया गया है। (पैरा 19,20) (379-जी; 380-ए-सी)

शिवाजी साहबराव बोबडे और अन्य बनाम महाराष्ट्र राज्य **(1973) 2 एससीसी 793 : (1994) (1) एससीआर 489** ; शरद बिरधीचंदसारडा बनाम महाराष्ट्र राज्य **(1984) 4 एससीसी 116 : (1985) (1) एससीआर 88** ; बोधराज एवं अन्य बनाम जम्मू और कश्मीर राज्य **(2002) 8 एससीसी 45 : (2002) (2) पूरक एससीआर 67 ;** जसवंत गि रबनाम पंजाब राज्य **(2005) 12 एससीसी 438 ;** अर्जुन मारिक एवं अन्य बनाम बिहार राज्य **1994 सप्लीमेंट (2) एससीसी 372 : (1994) (2) एससीआर 265- के माध्यम से संदर्भित।**

केस कानून संदर्भित

(1974) (1) एससीआर 489	**के माध्यम से संदर्भित**	**पैरा 7**
(1985) (1) एससीआर 88	**के माध्यम से संदर्भित**	**पैरा 7**
(2005) (1) एससीआर 710	**के माध्यम से संदर्भित**	**पैरा 11**
(2012) (4) एससीआर 366	**के माध्यम से संदर्भित**	**पैरा 12**
(2012) (7) एससीआर 91	**के माध्यम से संदर्भित**	**पैरा 12**
(2011) (8) एससीआर 83	**के माध्यम से संदर्भित**	**पैरा 12**
(2011) (12) एससीआर 1173	**के माध्यम से संदर्भित**	**पैरा 12**

(2002) (2) पूरक एससीआर 67 के माध्यम से संदर्भित पैरा 15

(2005) (12) एससीसी 438 के माध्यम से संदर्भित पैरा 16

(1994) (2) एससीआर 265 के माध्यम से संदर्भित पैरा 17

आपराधिक अपीलीय क्षेत्राधिकार : 2015 की आपराधिक अपील क्रमांक 378

1998 की आपराधिक अपील क्रमांक 1812 में बिलासपुर में छत्तीसगढ़ उच्च न्यायालय के निर्णय और आदेश दिनांक 25.03.2014 से।

अक्षत श्रीवास्तव, सुश्री पूजा श्रीवास्तव, सात्विक माथुर, अधिवक्ता द्वारा अपीलकर्ता।

सौरभ रॉय, डिप्टी एजी महेश कुमार, कौशल, सुश्री देविका खन्ना, श्रीमती वी.डी. खन्ना, सलाहकार द्वारा उत्तरदाता।

न्यायालय के द्वारा निर्णय दिया गया।

बेला एम. त्रिवेदी, जे.

1. त्वरित अपील 1998 की आपराधिक अपील क्रमांक 1812 में बिलासपुर में छत्तीसगढ़ उच्च न्यायालय द्वारा पारित दोषसिद्धि और सजा के निर्णय और आदेश के विरूद्ध निर्देशित है।

2. अभियोजन पक्ष के अनुसार, मृतिका कुमारी बृंदाबाई भागीरथी कुम्हार की बेटी थी जो कुम्हार जाति से थी। मृतक कन्हैया सिद्दार पांझर गांव का रहने वाला था और सिद्दार (गौड़) जाति का था, कुमारी बृंदाबाई और कन्हैया सिद्दार के बीच प्रेम प्रसंग चल रहा था, जो उक्त भागीरथी और उसके भाई चन्द्रपाल को मंजूर नहीं था। दिनांक 02.12.1994 को, लगभग 09:00 बजे सुबह, लोधू (अ.सा.-2) काजूबाड़ी (काजू नसर्री) गया और उसने देखा कि कुमारी बृंदा और कन्हैया के शव काजू के पेड़ पर लटके हुए थे। इसलिए वह वापस आया और इसकी जानकारी सरपंच बरन सिंह ठाकुर को दी। उनके शव सड़ी हुई अवस्था में थे और उनकी पहचान नहीं हो पा रही थी, लेकिन सूचना देने वाले चन्द्रपाल ने शवों की पहचान कर ली। इसके बाद, समय लगभग 16:00 बजे चन्द्रपाल और भोलासिंह (अ.सा.-4) द्वारा मर्ग की सूचना दर्ज कराई गई और दिनांक 11.12.1994 को समय 16:05 बजे नं. क्रमशः 67/94 और 68/94 शवों को पोस्टमार्टम के लिए भेज दिया गया। डॉ. आर.के. सिंह (अ.सा.-13) द्वारा किए गए मृतिका कुमारी बृंदा (एक्स.पी./22) के पोस्टमार्टम रिपोर्ट में, यह राय दी गई कि उसकी गर्दन पर लिगेचर का निशान प्रकृति में एंटीमॉर्टम था, और मृत्यु का कारण फांसी की वजह से दम घुटना प्रतीत हुआ। मृतक कन्हैया की पोस्टमार्टम रिपोर्ट (एक्स.पी./2 3) में भी यह राय दी गई की मृत्यु का कारण फांसी के कारण दम घुटना प्रतीत हुआ। दोनों पोस्टमार्टम रिपोर्ट में कहा गया कि मृत्यु 8 से 10 दिन के भीतर हुई थी और मृत्यु की प्रकृति आत्महत्या थी। अभियोजन पक्ष के आगे के प्रकरण के अनुसार, दिनांक 02.12.1994, को मृतक कन्हैया ग्राम पंचायत के परिसर में बैठा था, जहां कुछ टी.वी कार्यक्रम चल रहा था। इसके बाद वह उक्त स्थान से चला गया और अपनी कुल्हाड़ी (गंडासु) रगड़ने के लिए

हैंडपंप पर चला गया। उसी समय आरोपी चन्द्रपाल ने कन्हैया को बुलाया और अपने घर ले जाकर कमरे में बंद कर दिया और भागीरथी, चन्द्रपाल, मंगल सिंह और विदेशी सभी आरोपियों ने अपने सामान्य आशय के अधीन उसकी गर्दन दबा दी और उसकी हत्या कर दी। इसके बाद आरोपी मंगल सिंह और विदेशी ने कुमारी बृंदा की हत्या कर दी। हत्या करने के बाद उन्होंने कन्हैया और बृंदा के शवों को दिनांक 04.12.1994 तक घर में रखा और फिर शवों को काजूबाड़ी ले गए। इसके बाद आरोपियों ने दोनों मृतकों के शव को गले में फंदा लगाकर काजूबाड़ी में काजू के पेड़ से लटका दिया और इसे आत्महत्या का रूप देने का प्रयास किया।

3. सत्र न्यायालय ने चारों आरोपियों अर्थात भागीरथी, चन्द्रपाल, मंगल सिंह और विदेशी के विरूद्ध भा.द.सं. की धारा 302 विकल्पतः धारा 302 सहपठित धारा 34 के अधीन अपराध के लिए आरोप तय किया। प्रत्येक आरोपी पर भा.द.सं. की धारा 201 सहपठित धारा 34 के अधीन अपराध के लिए और अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति (अत्याचार निवारण) अधिनियम 1989 की धारा 3 (2) (v) के अधीन अपराध के लिए भी अलग से आरोप लगाए गए थे। अभियुक्त के विरूद्ध लगाए गए आरोपों को घर लाने के लिए अभियोजन पक्ष ने 16 गवाहों से पूछताछ की थी दस्तावेजी सबूत भी पेश किए थे। प्रथम अपर सत्र न्यायाधीश, रायपुर (छ.ग.), ने अभिलेख पर साक्ष्य का मूल्यांकन करने के बाद, दिनांक 03.08.1998 के निर्णय एवं आदेश द्वारा सभी आरोपियों को अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति अधिनियम की धारा 3 (2) (v) के अधीन उनके विरूद्ध लगाए गए आरोपों से उन्हें दोषमुक्त कर दिया। हालांकि, उन सभी को भा.द.सं. की धारा 302 और 201 सहपठित धारा 34 के अधीन अपराध का दोषी पाया गया। उन सभी को भा.द.सं. की धारा 302 सहपठित धारा 34 के अधीन अपराध के लिए आजीवन कारावास के अधीन दोषसिद्ध किया गया, और भा.द.सं. की धारा 201 सहपठित धारा 34 के अधीन दो साल की अवधि के कठोर कारावास भुगताए जाने का निर्देश दिया गया था।

4. सत्र न्यायालय द्वारा पारित निर्णय और आदेश से व्यथित होकर बिलासपुर में छत्तीसगढ़ उच्च न्यायालय के समक्ष अभियुक्त भागीरथी, चन्द्रपाल और मंगल सिंह ने 1998 की आपराधिक अपील क्रमांक 1812 के रूप में एक अपील प्रस्तुत की और अभियुक्त विदेशी ने 1998 की आपराधिक अपील क्रमांक 2005 के रूप में एक अपील प्रस्तुत की। उच्च न्यायालय ने आक्षेपित निर्णय और आदेश के माध्यम से आरोपी क्र. 2 चन्द्रपाल ने भा.द.सं. की धारा 302 सह-पठित धारा 34 और धारा 201 सह-पठित धारा 34 के अधीन अपराध के लिए 1998 की आपराधिक अपील क्रमांक 1812 उक्त आरोपी चन्द्रपाल के विरूद्ध है। हालांकि, उच्च न्यायालय ने भा.द.सं. की धारा 302 सह-पठित धारा 34 के अधीन अपराध के लिए आरोपी भागीरथी कुम्हार, मंगल सिंह और विदेशी पर किए गए दंडादेश एवं दोषसिद्धि को अपास्त कर दिया, फिर भी भा.द.सं. की धारा 201 सह-पठित धारा 34 के अधीन किए गए दंडादेश एवं दोषसिद्धि की पुष्टि की, और उन सभी को भुगती हुई अवधि का दंडादेश दिया। तदनुसार 1998 की आपराधिक अपील क्रमांक 1812 और 1998 की आपराधिक अपील क्रमांक 2005 को आंशिक रूप से स्वीकार किया गया। वर्तमान अपीलार्थी अभियुक्त चन्द्रपाल ने उक्त निर्णय एवं उच्च न्यायालय द्वारा पारित आदेश से व्यथित होकर वर्तमान अपील को प्राथमिकता दी।

5. अपीलकर्ता की ओर से उपस्थित हुए विद्वान अधिवक्ता श्री अक्षत श्रीवास्तव ने न्यायालय को अभियोजन पक्ष द्वारा परीक्षित कराए गए गवाहों, विशेष रूप से अ.सा.-2, अ.सा.-4, अ.सा.-5, अ.सा.-6 के साक्ष्यों के बारे में बताते हुए कहा कि ये ऐसे गवाह थे, उनके समक्ष आरोपी विदेशी द्वारा की गई कथित न्यायिकेत्तर संस्वीकृति के संबंध में उनके साक्ष्य में प्रमुख विरोधाभास है। इस न्यायालय के विभिन्न निर्णयों पर विश्वास करते हुए, उन्होंने कहा कि सह-अभियुक्तों द्वारा की गई न्यायिकेत्तर संस्वीकृति जो कि बहुत कमजोर प्रकार का साक्ष्य है, के आधार पर दोषसिद्धि नहीं की जा सकती। 'अंतिम बार देखे जाने' के सिद्धांत को खारिज करते हुए, उन्होंने प्रस्तुत किया कि अ.सा.1 धनसिंह का बयान जिसने कथित तौर पर कन्हैया को देखा था, जिसे वर्तमान अपीलकर्ता द्वारा बुलाया गया था, घटना के चार महीने बाद दर्ज किया गया था। यहां तक कि अभियोजन पक्ष के मामले के अनुसार, अपीलकर्ता द्वारा कन्हैया को फोन करने की उक्त घटना उस तारीख से दस दिन पहले की थी। जिस दिन काजुबाड़ी में शव पाए गए थे, और उस दिन के बीच लंबा अंतराल होने के कारण जब मृतक को कथित तौर पर अपीलकर्ता के साथ अंतिम बार देखा गया था और जिस दिन उसका शव पाया गया था, अपीलाकर्ता को केवल इस प्रकार के साक्ष्य के आधार पर दोषी ठहराया जाना बहुत जोखिम भरा था। उन्होंने आगे कहा कि पोस्टमार्टम करने वाले डॉक्टर ने भी कहा था कि मृत्यु का कारण फांसी के कारण दम घुटना था और प्रकृति आत्महत्या थी। इस प्रकार, अपीलकर्ता के विरूद्ध किसी भी स्पष्ट या ठोस सबूत के अभाव में, दोनों न्यायालयों ने अपीलकर्ता को दोषी ठहराने में घोर त्रुटि की थी।

6. हालांकि, उत्तरदाता राज्य की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि अपीलकर्ता के अपराध के संबंध में सत्र न्यायालय के साथ -साथ उच्च न्यायालय द्वारा समवर्ती निष्कर्ष दिए गए हैं, न्यायालय इसमें हस्तक्षेप नहीं कर सकता है। इस बात पर निष्पक्ष रूप से सहमत होते हुए कि न्यायिकेत्तर संस्वीकृति एक कमजोर साक्ष्य का भाग होगा, उन्होंने प्रस्तुत किया कि अभियोजन पक्ष द्वारा पेश किए गए अन्य संपुष्टिकारक साक्ष्य थे जो निर्णायक रूप से वर्तमान अपीलकर्ता को अपराध की ओर ले जाने वाली परिस्थितियों की पूरी श्रृंखला को साबित करते थे। उनके अनुसार दिनांक 02.12.1994 को कथित घटना के बाद, दिनांक 11.12.1994 को जब तक शव बरामद नहीं हुए, तब तक मृतक बृंदा और कन्हैया को गांव में किसी ने नहीं देखा था, और इसलिए अ.सा.-1 धनसिंह का साक्ष्य जिसने कन्हैया को आखिरी बार देखा था, वर्तमान अपीलकर्ता पर विश्वास करना आवश्यक था, जैसा कि निचली न्यायालयों ने माना है। उनके अनुसार, पोस्टमार्टम करने वाले संबंधित डॉक्टर ने यह भी राय दी थी कि मृतक की मृत्यु हत्या भी हो सकती है।

7. शुरूआत में, यह कहा जा सकता है कि अविवादित रूप से अभियोजन का पूरा प्रकरण परिस्थितिजन्य साक्ष्य पर आधारित था, क्योंकि कथित घटना का कोई चक्षूदर्शी साक्षी नहीं था। परिस्थितिजन्य साक्ष्य के मूल्यांकन पर कानून भी अच्छी तरह से स्थापित है। जैसा कि **शिवाजी साहबराव बोबडे और अन्य विरूद्ध महाराष्ट्र राज्य** [1] में माना गया है कि संबंधित परिस्थितियों को 'स्थापित किया जाना चाहिए या नहीं' स्थापित किया जा सकता है। न्यायालय द्वारा दोषी ठहराए जाने से पहले आरोपी को "दोषी होना ही चाहिए" न कि केवल "हो सकता है"। अपराध बोध के जो निष्कर्ष निकले हैं वे निश्चित निष्कर्ष होने चाहिए और अस्पष्ट अनुमानों पर आधारित नहीं होने चाहिए। परिस्थितियों की पूरी

---

[1] (1973) 2 एससीसी 793

चन्द्रपाल बनाम छत्तीसगढ़ राज्य(पूर्व म.प्र.)

[बेला एम. त्रिवेदी, जे. जे.]

श्रृंखला जिस पर अपराध का निष्कर्ष निकाला जाना है, पूरी तरह से स्थापित होना चाहिए और आरोपी की बेगुनाही के अनुरूप निष्कर्ष के लिए कोई उचित आधार नहीं छोड़ना चाहिए। **शरद बिरधीचंद सारदा विरूद्ध महाराष्ट्र राज्य** [2] के मामले में पैरा 152 में बताए गए पांच सुनहरे सिद्धांतों को तैयार संदर्भ के लिए पुनः प्रस्तुत किया जा सकता है:

> **" 152.** इस निर्णय का सूक्ष्मता से विश्लेषण करने पर पता चलेगा कि किसी अभियुक्त के विरूद्ध प्रकरण पूरी तरह से स्थापित होने से पहले निम्नलिखित शर्तों को पूरा किया जाना चाहिए:
>
> (1) जिन परिस्थितियों से अपराध का निष्कर्ष निकाला जाना है, उन्हें पूरी तरह से स्थापित किया जाना चाहिए।
>
> यहां यह ध्यान दिया जा सकता है कि इस न्यायालय ने संकेत दिया है कि संबंधित परिस्थितियों को 'स्थापित किया जाना चाहिए' और 'नहीं' किया जा सकता है। 'साबित किया जा सकता है' और 'साबित होना चाहिए या होना चाहिए' के बीच न केवल व्याकरणिक वरन कानूनी अंतर है, जैसा कि शिवाजी साहबराव बोबड़े बनाम महाराष्ट्र राज्य (1973) 2 एससीसी 793: 1973 एससीसी (सीआरआई) 1033: 1973 सीआरएल जे 1783) मामले में इस न्यायालय द्वारा आयोजित किया गया था। जहां अवलोकन किए गए थेः(एससीसी पैरा 19, पी. 807:एससीसी (सीआरआई) पी. 1047)
>
> " निश्चित रूप से, यह एक प्राथमिक सिद्धांत है कि आरोपी को न्यायालय द्वारा दोषी ठहराए जाने से पहले केवल दोषी नहीं होना चाहिए और 'हो सकता है' और 'होना चाहिए' के बीच की मानसिक दूरी लंबी है और कुछ निष्कर्षों से अस्पष्ट अनुमानों को विभाजित करती है।"
>
> (2) इस प्रकार स्थापित तथ्य केवल आरोपी के अपराध की परिकल्पना के अनुरूप होने चाहिए- अर्थात, उन्हें किसी अन्य परिकल्पना पर व्याख्यायित नहीं किया जाना चाहिए सिवाय इसके कि आरोपी दोषी है,
>
> (3) परिस्थितियां निर्णायक प्रकृति एवं प्रवृत्ति की होनी चाहिए,
>
> (4) उन्हें साबित किए जाने वाले को छोड़कर हर संभावित परिकल्पना को बाहर कर देना चाहिए, और

---

[2] (1984) 4 एससीसी 116

(5) साक्ष्य की एक श्रृंखला इतनी पूर्ण होनी चाहिए कि आरोपी की बेगुनाही के अनुरूप निष्कर्ष के लिए कोई उचित आधार न छोड़े और यह दिखाना चाहिए कि सभी मानवीय संभवनाओं में कार्य आरोपी के द्वारा किया गया हो।"

8. यह भी दोहराने की आवश्यकता नहीं है कि धारा 302 के अधीन अपराध के आरोप को साबित करने के लिए अभियोजन पक्ष को प्राथमिक तथ्य के रूप में 'हत्या की मृत्यु' को स्थापित करना होगा। धारा 302 के अधीन किसी आरोपी को दोषी ठहराने के लिए न्यायालय को पहले यह देखना होगा कि अभियोजन पक्ष ने मानव वध की बात को साबित कर दिया है या नहीं। जहां तक वर्तमान प्रकरण के तथ्यों का प्रश्न है, अ.सा.-1 3 डॉ. आर.के. सिंह की साक्ष्य जिन्होंने मृतक बृंदा और कन्हैया का पोस्टमार्टम किया था, इस संबंध में सबसे अधिक प्रासंगिक होंगी। उन्होंने न्यायालय के समक्ष अपने बयान में अन्य बातों के अतिरिक्त कहा था कि दिनांक 12.12.1994 को उन्होंने भागीरथी की बेटी कुमारी बृंदा और कन्हैया उर्फ चन्द्रशेखर गौड़ का पोस्टमार्टम किया था। दोनों मृतकों के शव सड़ी हुई अवस्था में थे। उन्होंने आगे कहा था कि मृतक बृंदा की गर्दन पर मौजूद गांठ का निशान पोस्टमार्टम से पहले का था और मृत्यु का कारण फांसी के कारण दम घुटना प्रतीत हुआ। मृत्यु 8 से 10 दिनों के भीतर हुई थी और मृत्यु की प्रकृति आत्महत्या थी। उक्त डॉक्टर ने कन्हैया के लिए भी इसी तरह के तथ्य बताए थे कि कन्हैया का शव उसकी गर्दन से बाईं ओर झुका हुआ पाया गया था और गर्दन पर 10" × 5 " आकार का एक संयुक्त निशान मौजूद था। मृत्यु का कारण फांसी के कारण दम घुटना प्रतीत हुआ तथा मृत्यु 8 से 10 दिन के अंदर होना प्रतीत हुई थी। उन्होंने आगे कहा था कि मृतकों के शरीर पर न तो कोई फैक्चर पाया गया था, और न ही कोई खून का थक्का पाया गया था, और न ही कोई चोट पाई गई थी, और इसलिए उनका मानना था कि मृत्यु का कारण फांसी था जो आमतौर पर आत्महत्या के प्रकरण में पाया जाता है। उन्होंने विशेष रूप से कहा कि चूंकि शव सड़ चुके थे, इसलिए वह इस बारे में कोई राय व्यक्त नहीं कर सके कि यह एक मानव वध हत्या थी। आरोपी के विद्वान अधिवक्ता द्वारा प्रतिपरीक्षण किए जाने में उसने स्पष्ट रूप से स्वीकार किया था कि उसे मानव वध हत्या का कोई लक्ष्ण नहीं मिला, न ही उसने दिनांक 12.12.1994 को दी गई अपनी रिपोर्ट में यह राय दी थी कि मृतक की मृत्यु मानव वध हत्या थी। निःसंदेह, उन्होंने कहा था कि दिनांक 30.04.1995 को सौंपी गई रिपोर्ट के आधार पर यह अनुमान लगाया जा सकता है कि मृत्यु मानव वध हत्याएं हो सकती हैं।

9. ध्यान देने योग्य बात यह है कि उच्च न्यायालय ने आक्षेपित निर्णय में डॉ. आर. के. सिंह के साक्ष्यों पर बिल्कुल भी विचार नहीं किया। भा.द.सं. की धारा 302 के अधीन अपराध के लिए अपीलकर्ता की दोषसिद्धि की पुष्टि करने से पहले इस निष्कर्ष पर पहुंचना होगा कि क्या ये मृत्यु मानव वध संबंधी मृत्यु थीं। दुर्भाग्य से, सत्र न्यायालय ने भी अपने निर्णय के पैरा 23 में टिप्पणी की कि डॉ. आर. के. सिंह के बयान महत्वपूर्ण नहीं थे क्योंकि उन्होंने एक राय व्यक्त की थी जो न तो अभियोजन पक्ष के लिए फायदेमंद थी और न ही बचाव के लिए फायदेमंद थी। हमारी राय में, जब अभियोजन पक्ष का प्रकरण परिस्थितिजन्य साक्ष्य पर आधारित था, तो अभियोजन पक्ष के लिए युक्तियुक्त संदेह से परे यह साबित करना आवश्यक था कि मृतकों की मृत्यु आत्महत्या नहीं थी, बल्कि मानववध की मृत्यु थीं, विशेष रूप से जब आरोपी की रक्षा के तथ्य थे कि बृंदा और कन्हैया ने आत्महत्या कर ली थी, और जब डॉ. आर.के. सिंह जिन्होंने उनका पोस्टमार्टम किया था, ने यह भी कहा था कि उनकी मृत्यु की प्रकृति आत्महत्या थी।

10. इसके लिए न्यायालय को अभियोजन पक्ष द्वारा विश्वास किए गए आपत्तिजनक साक्ष्य की जांच करने की आवश्यकता होती है, जो कि सह-अभियुक्त विदेशी द्वारा की गई न्यायिकेत्तर संस्वीकृति है। अभियोजन पक्ष के अनुसार, आरोपी विदेशी ने अ.सा.-4 भोला सिंह के समक्ष आत्म अभियोगात्मक संस्वीकृति की थी और अ.सा.-5 चन्द्रशेखर, अ.सा.-6 बरन सिंह और अ.सा.-7 दुकालूराम के समक्ष भी संस्वीकृति की थी, जिसमें वर्तमान अपीलकर्ता सहित अन्य आरोपी भी शामिल थे। अभियोजन पक्ष ने नोटरी के समक्ष कथित तौर पर पुष्टि किए गए विदेशी(पूर्व-पी/11) का एक शपथ-पत्र भी पेश किया था। हालांकि, सत्र न्यायालय ने विदेशी की न्यायिकेत्तर संस्वीकृति के साक्ष्य पर विश्वास करते हुए सभी चार आरोपियों को दोषी ठहराया, उच्च न्यायालय ने न्यायिकेत्तर संस्वीकृति, पर आंशिक रूप से विश्वास करते हुए, तीन आरोपियों अर्थात भागीरथी, मंगल सिंह और विदेशी को उनके विरूद्ध भा.द.सं. की धारा 302 सह-पठित धारा 34 के अधीन लगाए गए आरोपों से बरी कर दिया। हालांकि उन्हें धारा 201 सह-पठित 34 के अधीन अपराध के लिए यह मानते हुए कि उक्त आरोपी ने सबूतों को गायब करने की कोशिश की थी, दोषी ठहराया गया।

11. इस समय, यह ध्यान दिया जा सकता है कि साक्ष्य अधिनियम की धारा 30 के अनुसार, जबकि एक से अधिक व्यक्ति एक ही अपराध के लिए संयुक्त रूप से विचारित हैं, तथा ऐसे व्यक्तियों में से किसी एक के द्वारा, अपने को और ऐसे व्यक्तियों में से किसी अन्य को प्रभावित करने वाली की गई संस्वीकृति को साबित किया जाता है तब न्यायालय ऐसी संस्वीकृति को ऐसे अन्य व्यक्तियों के विरूद्ध तथा ऐसी संस्वीकृति करने वाले व्यक्ति के विरूद्ध विचार में ले सकेगा। हालांकि , इस न्यायालय ने लगातार यह माना है कि न्यायिकेत्तर संस्वीकृति एक कमजोर प्रकार की साक्ष्य है और जब तक यह विश्वास पर आधारित न हो या दृढ़ प्रकृति के किसी अन्य साक्ष्य द्वारा पूरी तरह से पुष्ट न हो, तब तक हत्या के अपराध के लिए आमतौर पर केवल न्यायिकेत्तर संस्वीकृति के साक्ष्य के आधार पर दोषसिद्धि नहीं की जाना चाहिए। जैसा कि **म.प्र. राज्य द्वारा सीबीआई एवं अन्य विरूद्ध पलटन मल्लाह और अन्य**[3] के प्रकरण में माना गया है कि, सह-अभियुक्तों द्वारा की गई न्यायिकेत्तर संस्वीकृति को केवल साक्ष्य के रूप में स्वीकार किया जा सकता है। आरोपी के विरूद्ध किसी ठोस सबूत के अभाव में, सह-अभियुक्त द्वारा कथित तौर पर की गई न्यायिकेत्तर संस्वीकृति अपना महत्व खो देती है और इसके आधार पर कोई दोषसिद्धि नहीं दी जा सकती है।

12. **सहदेवन और अन्य विरूद्ध तमिलनाडु राज्य**[4], में पैरा 14 में निम्नानुसार माना गया था:

> "14. यह आपराधिक न्यायशास्त्र का स्थापित सिद्धांत है कि न्यायिकेत्तर संस्वीकृति साक्ष्य का एक कमजोर भाग है। जहां भी न्यायालय, संपूर्ण अभियोजन साक्ष्य की उचित सराहना करते हुए, एक न्यायिकेत्तर संस्वीकृति पर दोषसिद्धि का आधार बनाना चाहती है, उसे अवश्य ही सुनिश्चित करना चाहिए कि यह विश्वास पर आधारित हो और अन्य अभियोजन साक्ष्य द्वारा इसकी पुष्टि की जाती हो। हालांकि

[3] (2005) 3 एससीसी 169

[4] (2012) 6 एससीसी 403

> यदि, न्यायिकेत्तर संस्वीकृति भौतिक विसंगतियों या अंतर्निहित असंभवताओं से ग्रसित हो और अभियोजन पक्ष के संस्करण के अनुसार ठोस प्रतीत नहीं होती हो, तो संस्वीकृति पर दोषसिद्धि का आधार बनाना न्यायालय के लिए कठिन हो सकता है। ऐसी परिस्थितियों में, न्यायालय ऐसे सबूतों को विचार से बाहर किए जाने हेतु पूरी तरह से न्यायोचित होगी।"

उक्त अनुपात को इस न्यायालय द्वारा भी दोहराया गया और उसका पालन किया गया **जगरूप सिंह विरूद्ध पंजाब राज्य**[5] **के मामले, एस.के.युसुफ बनाम पश्चिम बंगाल राज्य**[6] और **पंचो विरूद्ध हरियाणा राज्य**[7], जिसमें यह विशेष रूप से निधार्रित किया गया है कि न्यायिकेत्तर संस्वीकृति अपने आप में एक कमजोर साक्ष्य है और न्यायालय द्वारा इसकी जांच अधिक सावधानी और सतर्कता से की जानी चाहिए। यह सत्य होना चाहिए और विश्वास को जगाने वाला होना चाहिए। एक न्यायिकेत्तर संस्वीकृति अधिक विश्वसनीयता और साक्ष्यिक मूल्य प्राप्त करती है यदि इसे ठोस परिस्थिति की श्रृंखला द्वारा समर्थित किया जाता है और अन्य अभियोजन साक्ष्य द्वारा इसकी पुष्टि की जाती है। हस्तगत प्रकरण में यह सच है कि सह-अभियुक्त विदेशी ने कथित तौर पर अ.सा.-4 भोला सिंह के समक्ष आत्म-अभियोगात्मक न्यायिकेत्तर संस्वीकृति की थी, और अन्य गवाहों अर्थात अ.सा.-5 चन्द्रशेखर, अ.सा.-6 बरन सिंह ठाकुर, अ.सा.-7 दुकालूराम के समक्ष न्यायिकेत्तर संस्वीकृति की थी। जिसमें कहा गया था कि अन्य तीन आरोपियों अर्थात भागीरथी, चन्द्रपाल और मंगल सिंह ने हत्या की थी और उसने (अर्थात विदेशी) शवों को ठिकाने लगाने और छुपाने में उनकी सहायता करने के लिए कहा गया था। हालांकि, सह-अभियुक्त विदेशी द्वारा किए गए उक्त न्यायिकेत्तर संस्वीकृति के बीच असंगतता पर विचार करते उचित नहीं पाया और उच्च न्यायालय ने आश्चर्यजनक रूप से इस पर विचार किया। विदेशी द्वारा की गई उक्त न्यायिकेत्तर संस्वीकृति को अपीलकर्ता चन्द्रपाल के विरूद्ध उसके विरूद्ध लगाए गए अपराधों के लिए दोषी ठहराने के लिए एक आपत्तिजनक परिस्थिति के रूप में माना गया। हमारी राय में यदि सह-अभियुक्त विदेशी के साक्ष्य के ऐसे कमजोर भाग को विधिवत साबित नहीं किया गया था या मृतक बृंदा और कन्हैया की हत्या के लिए अन्य सह-अभियुक्तगण को दोषी ठहराने के लिए विश्वसनीय नहीं पाया गया था, तो उच्च न्यायालय उक्त साक्ष्य का उपयोग कथित अपराध के लिए वर्तमान अपीलकर्ता को दोषी ठहराने के उददेश्य से नहीं कर सकता।

13. यह न्यायालय को अभियोजन पक्ष द्वारा स्थापित "अंतिम बार एक साथ देखे जाने" के सिद्धांत का परीक्षण किए जाने की ओर ले जाता है। अभियोजन पक्ष के अनुसार, अ.सा.-1 धनसिंह ने आरोपी चन्द्रपाल को मृतक कन्हैया को फोन करके और उसे अपने घर के अंदर ले जाते हुए देखा था। इस तथ्य के अतिरिक्त उक्त धनसिंह ने उस समय या तारीख के बारे में नहीं बताया था जब उसने आखिरी बार कन्हैया को चन्द्रपाल के साथ देखा था, यहां तक कि यह भी मान लिया कि उसने चन्द्रपाल को अपने घर पर कन्हैया को बुलाते हूए देखा था जब वह ग्राम पंचायत के परिसर में बैठा था, यह उस दिन से भी दस दिन पहले हुआ था जब मृतकों के शव पाए गए थे। दोनों घटनाओं के बीच का समय अंतराल अर्थात वह

---

[5] (2012) 11 एससीसी 768

[6] (2011) 11 एससीसी 754

[7] (2011) 10 एससीसी 165

चन्द्रपाल बनाम छत्तीसगढ़ राज्य(पूर्व म.प्र.)

[बेला एम. त्रिवेदी, जे. जे.]

दिन जब धनसिंह ने चन्द्रपाल को अपने घर पर कन्हैया को बुलाते हुए देखा और जिस दिन कन्हैया का शव काफी बड़ा पाया गया था, वर्तमान अपीलकर्ता को कथित अपराध से जोड़ना मुश्किल है, विशेष रूप से तब जब अभियोजन पक्ष द्वारा कोई अन्य ठोस और निर्णायक साक्ष्य पेश नहीं किया गया हो।

14. इस संबंध में "अंतिम बार एक साथ देखे जाने " के सिद्धांत के संबंध में इस न्यायालय द्वारा निर्धारित कानून को फिर से लागू करना भी प्रासंगिक होगा।

15. **बोधराज और अन्य विरूद्ध जम्मू और कश्मीर राज्य** [8] के मामले में , इस न्यायालय ने पैरा 31 में अभिनिर्धारित किया है कि :

> **" 31.** आखिरी बार देखा गया का सिद्धांत लागू होता है जहां उस समय के बीच का समय-अंतराल इतना कम था कि जब आरोपी और मृतक को आखिरी बार जीवित देखा गया था और जब मृतक मृत पाया गया तो आरोपी के अलावा किसी अन्य व्यक्ति के अपराध का लेखक होने की संभावना असंभव हो जाती है ...."

16. **जसवंत गिर विरूद्ध पंजाब राज्य** [9], में न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि परिस्थितिजन्य साक्ष्य की श्रृंखला में किसी अन्य संबंध के अभाव में , अभियुक्त को केवल "अंतिम बार एक साथ देखे जाने" के सिद्धांत के आधार पर दोषी नहीं ठहराया जा सकता है, भले ही इस संबंध में अभियोजन पक्ष के गवाह के संस्करण पर विश्वास किया जाए।

17. **अर्जुन मारिक व अन्य विरूद्ध बिहार राज्य** [10] के प्रकरण में यह देखा गया कि केवल "अंतिम बार एक साथ देखे जाने" के सिद्धांत के आधार पर अंतिम बार देखी गई परिस्थितियों की श्रृंखला इस निष्कर्ष पर पहुंचने के लिए पूरी नहीं होगी कि यह केवल अभियुक्त के अपराध की परिकल्पना के अनुरूप है, और इसलिए केवल उक्त आधार पर कोई दोषसिद्धि स्थापित नहीं की जा सकती है।

18. जैसा कि उपर वर्णित किया गया है कि भा.द.सं. की धारा 302 के अधीन किसी आरोपी को दोषी ठहराने के लिए अभियोजन के द्वारा साबित किया जाने वाला पहला और सबसे महत्वपूर्ण पहलू मानववध का तथ्य है। यदि अभियोजन पक्ष का साक्ष्य मृतक की हत्या के साक्ष्य से कम है और यदि आत्महत्या की मृत्यु की संभावना से इंकार नहीं किया जा सकता है, तो इस न्यायालय की राय में अपीलकर्ता-आरोपी को " अंतिम बार एक साथ देखे जाने " के सिद्धांत के आधार पर दोषी नहीं ठहराया जा सकता।

19. अतः अभिलेख पर साक्ष्य की समग्रता को ध्यान में रखते हुए, न्यायालय की राय है कि उच्च न्यायालय ने सह-अभियुक्त विदेशी द्वारा कथित रूप से किए गए न्यायिकेत्तर संस्वीकृति के बहुत ही कमजोर प्रकार के साक्ष्य पर विश्वास करते हुए, और अ.सा.-1 धनसिंह द्वारा स्थापित "अंतिम

---

[8] (2002) 8 एससीसी 45

[9] (2005) 12 एससीसी 438

[10] 1994 सप्लीमेंट (2) एससीसी 372

बार एक साथ देखे गए" के सिद्धांत पर विश्वास करते हुए, भा.द.सं. की धारा 302 और 34 के कथित आरोप के लिए अपीलकर्ता-आरोपी को दोषी ठहराने में घोर त्रुटि थी। यह भी ध्यान देने योग्य है कि मृतक बृंदा की कथित रूप से हत्या कैसे और किसके द्वारा की गई थी, इस बारे में अभियोजन पक्ष द्वारा कोई साक्ष्य पेश नहीं किया गया था। इन परिस्थितियों में, यह अभिनिर्धारित किया गया कि संदेह चाहे जितना भी मजबूत क्यों न हो, सबूत की जगह नहीं ले सकता। अतः अभियोजन अपीलकर्ता-आरोपी के विरूद्ध लगाए गए आरोपों को युक्तियुक्त संदेह से परे साबित करने में पूर्णतः विफल रहा है।

20. उपर वर्णित किए गए कारणों से अपील स्वीकार की जाना चाहिए, तदनुसार अपील स्वीकार की जाती है। अपीलकर्ता-आरोपी चन्द्रपाल को उसके विरूद्ध लगाए गए आरोपों से दोषमुक्त किया जाता है। उसे तुरंत रिहा किए जाने का निर्देश दिया जाता है।

21. कार्यालय को आवश्यक कार्य करने एवं आदेश की प्रति जल्द से जल्द संबंधित जेल प्राधिकरण को भेजने का निर्देश दिया जाता है।

निधि जैन अपील स्वीकार की गई।

अनुवादक

PREETI THAKUR Digitally signed by PREETI THAKUR